चरित्र निर्माण क्यों और कैसे?

मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी

अनुवाद

कौसर लईक़

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"दयावान, कृपाशील अल्लाह के नाम से।"

चरित्र निर्माण
क्यों और कैसे?

नैतिक शिष्टाचार वास्तव में मानवता का असल जौहर और मानव व जानवर के बीच अन्तर करनेवाली चीज़ है। लोक और परलोक में मानव की सफलता नैतिक शिष्टाचार पर ही निर्भर है। कोई मानव अपनी वैयक्तिक हैसियत में और कोई भी मानवीय गरोह अपनी सामाजिक हैसियत में नैतिक शिष्टाचार के बिना सफल हो ही नहीं सकता। मानव-जीवन का कोई विभाग ऐसा नहीं है, जिसे अपनी स्थिरता के लिए कुछ आधारभूत शिष्ट व्यवहारों की आवश्यकता न हो। क्या आपको शान्ति मिल सकती है यदि आपके शहर और बस्तियों में मानवीय जीवन का सम्मान और दूसरों के अधिकारों का लिहाज़ मौजूद न हो? क्या आपका समाज तबाही से बच सकता है अगर उमसें हर व्यक्ति प्रभुत्व व शक्ति पाकर अपनी सीमाओं का उल्लंघन करने और दूसरों की जान, माल और इज़्ज़त पर हाथ डालने का अभ्यस्त हो? क्या आप किसी सभ्यता की कल्पना कर सकते हैं, यदि लोगों और गराहों के बर्ताव को नियमबद्ध करने के लिए कोई उचित क़ानून मौजूद न हो, या मौजूद तो हो मगर उसका अनुपालन न किया जाता हो? क्या कोई मज़बूत सुसंस्कृत व्यवस्था चला सकते हैं, अगर आपके समाज में, आपकी राजनीति में और आपकी अर्थ-व्यवस्था में सत्यनिष्ठा, न्याय प्रियता, कर्तव्य परायणता और सच्चाई विद्यमान न हो? बल्कि मैं पूछता हूँ, क्या आप एक आज़ाद

क़ौम की हैसियत से अपने अस्तित्व को भी बचा सकते हैं, यदि आपके लोगों में स्वार्थपरता पल रही हो, जो उनके दिलों में अपने व्यक्तित्व और स्वहित से उच्चतर किसी चीज़ की वफ़ादारी के लिए कोई गुंजाइश बाक़ी न छोड़े।

मुसलमान और नैतिकता

एक मुसलमान की हैसियत से आप देखें तो नैतिक गिरावट के साथ हम सिरे से किसी इस्लामी जीवन की परिकल्पना ही नहीं कर सकते। मुसलमान तो मुसलमान बनाया ही इसलिए गया है कि उसके व्यक्तित्व से दुनिया में भलाई स्थापित हो और बुराई मिटे। भलाई को मिटाना और बुराई फैलाना और फिर उसके साथ मुसलमान भी होना, यह वास्तव में एक स्पष्टतः विरोधाभासी तथ्य है। एक व्यक्ति मुसलमान हो और फिर भी उसकी बुराई से ख़ुदा के दूसरे बन्दे सुरक्षित न हों, एक व्यक्ति मुसलमान हो और फिर भी वह भलाई से भागे और बुराई की ओर लपके, अवैध (हराम) चीज़ें खाए और अवैध तरीक़ों से अपने मन की इच्छाएँ पूरी करे तो आख़िर उसके मुसलमान होने का लाभ क्या है? किसी समाज के लिए इससे बढ़कर कोई रुसवाई की बात नहीं हो सकती कि वह न्याय और इनसाफ़ से ख़ाली और ज़ुल्म व अत्याचार से परिपूर्ण होता चला जाए। उसमें दिन प्रतिदिन भलाइयाँ दबती और बुराइयाँ परवान चढ़ती जाएँ और उसके अन्दर ईमानदारी, अमानतदारी और सज्जनता के लिए फलने-फूलने के अवसर कम से कमतर होते चले जाएँ। यह ख़ुदा के प्रकोप का आह्वान करनेवाली स्थिति है। यदि किसी मुस्लिम समाज की यह स्थिति हो जाए तो इसका अर्थ यह है कि वह इस्लाम की

आत्मा से रिक्त हो चुका है। केवल इस्लाम का नाम ही उसमें शेष रह गया है तथा यह नाम भी अब केवल इसलिए रह गया है कि दुनिया को इस "सत्य धर्म" से दूर भगाता रहे।

दुनिया की सफलता और नैतिकता

मुसलमान नैतिक पतन की ओर अग्रसर होता ही उस समय है, जब उसे ख़ुदा की प्रसन्नता और आख़िरत (परलोक) की सफलता की आकांक्षा नहीं रहती और केवल दुनिया उसका अभीष्ट बनकर रह जाती है। किन्तु वास्तविकता यह है कि नैतिक गिरावट के साथ कोई क़ौम दुनिया की सफलता भी प्राप्त नहीं कर सकती। इस गिरावट व पतन के साथ तो आख़िरत भी हाथ से जाती है और दुनिया भी हाथ नहीं आती।

सबसे बढ़कर दौलत की प्यास हमको सांसारिक मोह की ओर ले जा रही है, किन्तु इसके लिए हमने लोगों और वर्गों की स्वार्थपरता और बेईमानी को साधन बनाया है। यद्यपि इससे बढ़कर कोई चीज़ हमारी आर्थिक उन्नति के मार्ग में अवरोधक नहीं है। मुझे पूर्व मध्य देशों के अनेक देशों में जाने का संयोग हुआ। वहाँ जब मैंने व्यापारियों से कहा कि आप जो माल बाहर के कुछ ग़ैर-मुस्लिम देशों से मँगाते हैं वह आपके एक भाई मुस्लिम देश पाकिस्तान से भी मिल सकता है। उसे छोड़कर आप दूसरों से क्यों ख़रीदते हैं? तो उनका जवाब सुनकर मैं शर्म से पानी-पानी हो गया कि हमनें मजबूरन पाकिस्तान से माल मँगवाना बन्द किया है। वहाँ पर अच्छा नमूना दिखकार ऑर्डर बुक किए जाते हैं और उस आर्डर की पूर्ति में रद्दी माल भेज दिया जाता है। अब बताइए कि इस बेईमानी और धोखा-धड़ी के साथ हम व्यापार में कोई तरक़्क़ी कर सकते हैं? हमारे

कारख़ानादार और बड़े व्यापारी जिस स्वार्थ के साथ बे तहाशा मुनाफ़ाख़ोरी कर रहे हैं, इससे एक सीमित वर्ग तो निस्सन्देह मज़बूत होता जा रहा है, किन्तु क़ौम समष्टीय रूप से कमज़ोर होती जा रही है। यह चीज़ आख़िर कब तक हमें इस वर्गीय संघर्ष की आग में झुलसने से बचा सकेगी, जिसमें इसी प्रकार की बेवक़ूफ़ी करनेवाले बहुत से देश झुलस चुके हैं। फिर इस स्वार्थपरता के कारण हमारे कर्मचारी वर्गों में कामचोरी और अपने कर्तव्य से लापरवाही और केवल अपने अधिकारों के लिए लड़ने की जो बीमारी फैल रही है, क्या वास्तव में यह वही मार्ग है जिससे हम आर्थिक उन्नति की ओर अग्रसरता कर सकेंगे?

शिक्षा और नैतिकता

हम एक लम्बे समय से भौतिक उन्नति के लिए शिक्षा, शिक्षा का शोर मचा रहे हैं। लेकिन हमारी समस्त कोशिशें केवल किताब पढ़नेवाला बनाने ही में बरबाद होती रही हैं। मानव बनाने और मुसलमान बनाने की हमने कोई चिन्ता नहीं की है। बल्कि इसके विपरीत हमारे शिक्षा-केन्द्र धड़ा-धड़ ऐसे लोग तैयार कर-करके निकाल रहे हैं, जो मानवीय शिष्टाचार से भी वंचित हैं और इस्लामी शिष्टाचार से भी। हमारे पाठ्यक्रम, शिक्षा-शैली और शैक्षणिक वातावरण में सिरे से इस चिन्ता का कोई चिह्न नहीं मिलता कि हमें अपने लोगों में कोई क़ौमी चरित्र भी पैदा करना है। इसी का फल है कि शासन सहित हमारे जीवन के सभी विभागों को जो लोग मिल रहे हैं उनके अन्दर कोई विश्वसनीय चरित्र नहीं पाया जाता। कुछ थोड़े से लोगों को छोड़कर, जो दिन प्रतिदिन अल्प से अल्पतम होते जा रहे

हैं, हमारे जीवन के प्रत्येक विभाग को निम्न श्रेणियों से लेकर उच्चतम पदों तक वे लोग चला रहे हैं जिनके अन्दर सच्चाई, ईमानदारी और कर्तव्य-परायणता का अभाव है। जिन्हें ज़रा-सा लालच या थोड़ा-सा ख़ौफ़ भी सीधे मार्ग से सफलतापूर्वक विचलित कर देता है। जो अपने तुच्छ से लाभ के लिए दूसरों को, यहाँ तक कि अपनी क़ौम और अपने देश को भी बड़े से बड़ा नुक़सान पहुँचा देने में झिझक महसूस नहीं करते। जिनकी निगाह में अन्तरात्मा और ईमान की कोई क़ीमत नहीं। जिन्हें अपने निजी स्वार्थ के लिए किसी सिद्धान्त और नियम को तोड़ देने में कोई डर और लज्जा नहीं। आध्यात्मिक विकास का प्रश्न तो बहुत ऊँचा है, क्या यह शिक्षा किसी भौतिक विकास में भी हमारे लिए वस्तुतः सहायक हो सकती है? जिस चरित्र में अमानतों का बोझ उठाने और डर व आकांक्षा के मुक़ाबले में ठेहर जाने की शक्ति न हो वह जीवन-क्षेत्र के किसी मैदान में भी आख़िर हमें कितनी दूर ले जा सकता है।

हमारी असल शक्ति

हमारी असल शक्ति वे भौतिक संसाधन नहीं हैं जो पैदा करनेवाले ने हमें प्रदान कर रखे हैं, बल्कि वे इनसान हैं जिन्हें उन साधनों से काम लेना है। ये इनसान अगर बिगड़ जाएँ तो भौतिक संसाधन हमारे किस काम आ सकते हैं। उनके बिगाड़ और उस बिगाड़ के प्रभाव को हम केवल शासन और क़ानून की ताक़त से नहीं रोक सकते। क्योंकि उस ताक़त का प्रभावकारी होना भी उन लोगों के चरित्र और आचरण ही पर निर्भर है, जो उस ताक़त को इस्तेमाल करें। संसार में कोई अच्छे से अच्छा क़ानून भी कोई श्रेयस्कर परिणाम पैदा नहीं कर

सकता, यदि उसको लागू करनेवाले स्वयं उसको तोड़ें और उसे अपने दुष्कर्मों के लिए हथियार बनाने पर तुल जाएँ। हर प्रतिबन्ध, जो आप किसी ख़राबी को रोकने के लिए लगाएँगे, एक भ्रष्ट व्यवस्था के लिए अनुचित लाभ उठाने का एक नया द्वार खोल देगा और सुधार के बजाए और ख़राबी और भ्रष्टाचार का कारण बन जाएगा। आपका क़ानून अपनी जगह चाहे कितना ही बौद्धिक और न्यायपूर्ण हो, वह समाज में न्याय स्थापित करने का चमत्कार नहीं दिखा सकता यदि न्याय की कुर्सी पर बैठनेवाले ही न्याय का ख़ून करने लगें और क़ानून की पकड़ में लानेवाला तंत्र ही ज़ुल्म और अत्याचार पर कटिबद्ध हो जाए। दूसरी ओर देखिए तो आपको नज़र आएगा कि वर्तमान समय की सर्वाधिकार नीति ने प्रत्येक देश के प्राकृतिक स्रोतों व संसाधनों को बहुत बड़ी हद तक सरकार के नियन्त्रण में दे दिया है। कोई क़ौम व जाति भी सीधे तौर पर उनसे लाभ नहीं उठाती, बल्कि शासन इससे लाभान्वित होने को नियमबद्ध करता है और शासन के इस काम को उसके कर्मचारी ही पूरा करते हैं। उन कर्मचारियों के सत्यनिष्ठ, कर्तव्यपरायण और सिद्धान्तवादी होने की स्थिति में ख़ुदा के दिए हुए स्रोतों और संसाधनों से जितना लाभ उठाया जा सकता है उसके दशवें का दशवाँ अंश भी ऐसी स्थिति में नहीं उठाया जा सकता, जबकि उन कर्मचारियों को रिश्वत, ख़यानत, कामचोरी, सिफ़ारिश, भाई-भतीजावाद और स्वार्थ जैसी बीमारियाँ लगी हुई हों और संविधान व क़ानून का कोई सम्मान उनके अन्दर मौजूद न हो। स्वयं शासन को भी जो आय करों और दूसरे स्रोतों से हो सकती है, बेईमान और भ्रष्ट कर्मचारियों की वजह से न वह कभी पूरी तरह वुसूल होती है और न उसका सही इस्तेमाल ही

पूरी तरह होता है।

यह तो उस स्थिति की बात है, जबकि विधान और क़ानून स्वयं में सही हो और शासक वर्ग भी सही हो। केवल कर्मचारी बिगड़े हुए हों। लेकिन जहाँ विधान और क़ानून तक में बेइनसाफ़ी की अधिकता और स्पष्टतः अबौद्धिक बातें मौजूद हों और शासक वर्ग नैतिक गिरावट में कर्मचारियों के साथ न केवल बराबर के शरीक हों, बल्कि उनसे स्वयं काम लेते हों, वहाँ बिगाड़ अपनी चरम सीमा को पहुँच जाता है और शासन सुधार का साधन बनने के बजाए स्वयं बिगाड़ का कारण बन जाता है।

प्रजातन्त्र और नैतिक गुण

हमने शासक वर्ग के लोगों और क़ानून निर्माताओं के चुनाव के लिए प्रजातन्त्र का तरीक़ा अपनाया है, लेकिन यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि "प्रजातन्त्र" के नाम में कोई चमत्कार नहीं है, जो आपसे आप इस चुनाव को सही बना दे। प्रजातन्त्र स्वयं भी अपनी सफलता के लिए कुछ नैतिक गुणों का मुहताज है, जो अगर विद्यमान न हों तो वह सिरे से चल ही नहीं सकता। इसके लिए कम से कम जो गुण अपेक्षित हैं, वे ये हैं–

(1) जिस क़ौम में प्रजातन्त्र लागू किया जा रहा हो उसके अन्दर स्वयं अपने अधिकारों की सही समझ और उनकी रक्षा का सुदृढ़ इरादा विद्यमान हो। वह सामाजिक दृष्टि से इतना साहस व हिम्मत रखती हो कि किसी दमन को अपने ऊपर मुसल्लत न होने दे और उसके अधिकांश लोग किसी लालच में आकर अपना मत बेचने या डर से अपने अन्तःकरण के

ख़िलाफ़ मत देने या किसी स्वार्थ के कारण या अनुचित पक्षपात के कारण अयोग्य लोगों के पक्ष में मत देने के लिए तैयार न हों।

(2) उसकी व्यवस्था को चलानेवाले कर्मचारियों और उसकी रक्षात्मक सेवा करनेवाले सिपाहियों में इतना देश-प्रेम, इतना संविधान-प्रेम और स्वयं प्रजातन्त्र की अवधारणा के साथ इतनी वफ़ादारी विद्यमान हो कि वह न तो प्रजातन्त्र की जगह किसी दमन को अपने देश पर प्रभावी करने के षड्यंत्र में साधन बनें और न संविधान व क़ानून के विरुद्ध कोई उनको प्रयोग कर सके। उन्हें ईमानदारी के साथ प्रजातन्त्र के उस दृष्टिकोण का क़ायल होना चाहिए और इसपर सख़्ती के साथ निष्ठावान रहना चाहिए कि शासन चलाना वस्तुतः जनता के प्रतिनिधियों का काम है, जिन्हें जनता अपनी स्वतन्त्र इच्छा से अपना प्रतिनिधि बनाए और शासन के कर्मचारियों का काम यह है कि जनता जिन लोगों को भी अपना प्रतिनिधी चुने, वे उनके अधीन होकर काम करें। उनके अन्तःकरण में इतनी शक्ति होनी चाहिए कि वे जनता से चुनाव की स्वतन्त्रता छीन लेने के लिए न स्वयं तैयार हों और न कोई उनसे यह सेवा ले सके।

(3) क़ौम के प्रभावशाली लोगों में अधिकता ऐसे लोगों की होनी चाहिए जो स्वार्थपरता में इतने अंधे न हो जाएँ कि अपने प्रभुत्व का तख़्त बिछाने के लिए स्वयं अपनी जनता को और अपने देश के शासन-कर्मचारियों को अंतःकरण बेचने, कायरता और बेईमानी का प्रशिक्षण देने पर तत्पर हो जाएँ। उनमें अगर सत्ता की चाह हो भी तो कम से कम वह मर्यादित होनी

चाहिए। वे सत्ता को ख़रीदने या ज़बरदस्ती ख़सोट लेने के बजाए सेवा और सत्कर्म के द्वारा जनता में अपना विश्वास पैदा करें और फिर जनता की मर्ज़ी से यदि वह उनको प्राप्त हो जाए तो सत्ता में आएँ।

ये तीन शर्तें जहाँ न पाई जाती हों वहाँ हक़ीक़त में कोई प्रजातन्त्र न स्थापित हो सकता है और न चल सकता है। स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्र का बोझ मज़बूत स्तम्भ और थूनी ही संभाल सकते हैं। कमज़ोर और घुन खाई हुई थूनी और स्तम्भों पर यह बोझ जहाँ भी लादा जाएगा ज़मीन में धराशायी हो जाएगा। नाम प्रजातन्त्र का होगा, किन्तु दमन और अत्याचार क्रियाशील होगा। अनुचित साधनों से सत्ता में आनेवाले लोग कभी नेक नहीं हो सकते। वे क़ानून-निर्माण और क्रियान्वयन दोनों में हक़ और इनसाफ़ के बजाए अपने स्वार्थ को ऊपर रखेंगे। ऐसी स्थिति में सिरे से न तो क़ानून का सम्मान बाक़ी रह सकता है और न शासन-शक्ति बिगाड़ के बजाए सुधार का काम पूरा कर सकती है।

सबसे बड़ा संकट

सबसे बड़ा संकट हमारे लिए यह है कि हमारे शिष्टाचार और चरित्र का निर्माण जिन बुनियादों पर हुआ था। वही सिरे से ध्वस्त होता चला जा रहा है। ख़ुदा, रसूल, क़ुरआन और आख़िरत पर ईमान वे आधारभूत चीज़ें हैं, जिस पर एक मुसलमान व्यक्ति या क़ौम के नैतिक आचरण की इमारत क़ायम होती है। मगर हमारी व्यवस्था, शिक्षा प्रणाली और शैक्षणिक वातावरण, इस बुनियाद को मज़बूत करना तो दूर की

बात, दिन-प्रति-दिन उसे कमज़ोर से कमज़ोर करता चला जा रहा है और इसके विपरीत एक अधार्मिक (नास्तिक) संस्कृति की धारणाएँ सत्ता और कार्यशैलियों की उच्चता का नक़्श दिलों पर बिठा रहा है। किसी को महसूस नहीं होता कि यह हरकत करके हम वस्तुतः स्वयं अपने क़ौमी स्वाभिमान की जड़ खोद रहे हैं। फिर दूसरी चीज़ वैध और अवैध की वह समझ थी जिसकी सुदृढ़ता और स्थायित्व पर हमारी नैतिकता की सुदृढ़ता और स्थायित्त्वता निर्भर थी। किन्तु हम उसे बचाने और सँभालने के बजाए उसकी जड़ काटने में लगे हुए हैं। हमारी पूरी सामाजिक व्यवस्था सूद पर चल रही है, जिसे हर मुसलमान जानता है कि इस्लाम ने इसको अवैध ठहराया है। हमारे समाज में शराब पीने की लत दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यद्यपि दुनिया की क़ौमों में मुसलमानों को यह विशिष्टता प्राप्त थी कि उनके समाज ने शराब बन्दी में सबसे बढ़कर सफलता प्राप्त की है। हमारे यहाँ लैंगिक अनैतिकता भी वृद्धिमान है और हम पश्चिमी सभ्यता के अन्धानुकरण में निर्लज्जता, स्त्री-पुरुष के आपस में खुल्लम-खुल्ला मेल-जोल, अश्लील साहित्य, अश्लील फिल्मों और अश्लील गीतों के द्वारा उसको बढ़ावा देते चले जा रहे हैं। यद्यपि मुस्लिम समाज कभी इस दृष्टि से भी दुनिया के सारे समाजों से बढ़कर सच्चरित्र था। इन अनिवार्य मर्यादाओं को तोड़ देने के बाद इसकी अन्ततः क्या सम्भावना है कि हमारी जनता और विशिष्ट लोगों से सिरे से कोई वैध-अवैध में अन्तर करने का विवेक शेष रह जाए और वह रिश्वत, ग़बन, ख़ियानत, ग़सब (बलात् ग्रहण), चोरी और ऐसे ही दूसरे अवैध (हराम) कर्मों से बचें। तीसरी महत्वपूर्ण चीज़ वे मूल्य हैं जो

हमको नैतिकता के उच्च शिखर पर क़ायम रहने के लिए अपने धर्म से और अपनी सामाजिक रिवायतों से मिली थीं। सत्य-प्रियता, सत्य-ज्ञान, न्याय व इनसाफ़, सत्यनिष्ठा व अमानत, सत्यपथगामिता, सन्तोष, लज्जा, पातिव्रत्य, शील-संकोच और सबसे बढ़कर तक़वा और एहसान वे चीज़ें थीं जो मुसलमान होने की हैसियत से हमारे लिए वास्तव में आदरणीय होनी चाहिए थीं। किन्तु हमने उनकी जगह सम्पन्नता, वैभवशाली जीवन, चौधराहट, प्रभुत्त्व व सत्ता और विलासिता को आदरणीय बना लिया है चाहे वह किसी भी ज़रीए से हासिल हो।

कैसे बचें?

अब आप पूछेंगे कि नैतिक गिरावट के इस गढ़े में गिरने से और उसके विनाशकारी परिणामों से हम कैसे बच सकते हैं? मैं निवेदन करूँगा कि सबसे पहले तो इस बात का एहसास पैदा होना चाहिए और यह एहसास आम जनता से बढ़कर ख़ास लोगों और देश के शासक वर्ग में होना चाहिए। जब तक वे यह न जानेंगे कि नैतिकता के बिना हमारे लिए किसी उन्नति का बल्कि एक स्वतन्त्र राष्ट्र की हैसियत से नित्यता की भी सम्भावना नहीं है उस समय तक, राष्ट्रीय स्तर पर चरित्र-निर्माण के लिए कुछ नहीं किया जा सकेगा। वैयक्तिक प्रयास तो अल्लाह की कृपा से होते रहे हैं। हमारा समाज ऐसे लोगों से कभी रिक्त नहीं रहा है, जिन्होंने अपनी हद तक इसकी कोशिशें की हों। किन्तु उनका कोई नतीजा इससे अधिक नहीं हो सकता था कि पतन की गति उतनी तेज़ न हो सकी जितनी उसके बिना होती। क़ौम का नीतिगत आचरण बनाना हर स्थिति में राष्ट्रीय स्तर पर कोशिश चाहता है और वह इसके

बिना नहीं हो सकता कि देश के शासक वर्ग को उसकी आवश्यकता का और उसके अनैतिक आचरण के विनाशकारी परिणामों का एहसास हो।

आवश्यकता की अनुभूति के बाद यह जानना और समझना भी अपरिहार्य है कि चरित्र-निर्माण किसी आधारभूत दर्शन और किसी रचनात्मक नक़्शे के बिना नहीं हो सकता। आप केवल चरित्र-चरित्र की रट लगाकर और मात्र सतही तौर पर कुछ जाने-पहचाने शिष्टाचार सम्बन्धी विज्ञापन देकर तो कोई क़ौमी-चरित्र नहीं बना सकते। आपको निस्सन्देह एक मौलिक दर्शन अपेक्षित है जिसके लिहाज़ से आप भलाई-बुराई का भेद और नैतिक सत्ता निश्चित करें। आपको इन नैतिक मूल्यों की सहायता के लिए कुछ धारणाएँ (अक़ीदे) अपेक्षित हैं, जो लोगों के अन्दर उनका सम्मान गहरी जड़ों के साथ जमा दें। आपके सामने चरित्र-निर्माण के लिए नक़्शा भी होना चाहिए, जिसके अनुसार आप चरित्र और व्यवहार की बुनियादें उठाएँ। मानव बनाने से पूर्व यह ज्ञात होना चाहिए कि आप कैसे मानव बनाना चाहते हैं और यह भी जानना चाहिए कि इस विशेष प्रकार के मानव किस प्रकार बन सकते हैं।

तीसरी बात यह भी समझ लेनी चाहिए कि आप किसी क़ौम में बाहर से कोई दर्शन और नक़्शा लाकर चरित्र निर्माण नहीं कर सकते। निर्माण यदि सम्भव है तो उसी दर्शन और नक़्शे पर सम्भव है जो उस विशेष क़ौम के स्वभाव और उसकी परम्पराओं में पहले से अपनी गहरी जड़ें रखता हो। विशेषकर यह बात मुसलमानों के मामले में बहुत महत्वपूर्ण है कि यह

कोई जंगली या नव धन सम्पन्न क़ौम नहीं है, जिसका कोई विगत इतिहास न हो, जिसका अपना कोई जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण और नैतिकता सम्बन्धी दर्शन न हो, जो अब नए सिरे से क़ौमी जीवन का आरम्भ कर रही हो। ऐसी क़ौम में तो कोई दर्शन कहीं से आयात करके लाया भी जा सकता है। लेकिन मुसलमान सैकड़ों साल से अपनी कुछ धारणाएँ रखते हैं। भलाई-बुराई का आदर्श रखते हैं, कुछ नैतिक मान्यताएँ रखते हैं और इस पूँजी पर आज इस गई गुज़री स्थिति में भी उनको गर्व है। उनके इतिहास ने उनको मानवता के कुछ नमूने दिए हैं, जिन्हें वे जीवन-चरित्र व आचरण की सर्वोच्च मिसालें समझते हैं और वही उनकी निगाह में पूर्ण आदर्श हैं। आप कोई बाह्य दर्शन कुछ नई मान्यताओं और कुछ नए आदर्शों के साथ ला कर यहाँ चरित्र निर्माण करना चाहें, तो आपको एक लम्बी अवधि तक अपनी समस्त शक्तियाँ उन पुरानी बुनियादों को ध्वस्त करने और नई बुनियादें रखने में लगानी पड़ेंगी। यह प्रयास इस क़ौम के रहे-सहे शिष्टाचार व नैतिक आचरण का भी सर्वनाश कर देगा। इस विनाश से यदि यह किसी न किसी तरह जीवित बचे तो नए चरित्र का निर्माण कर लीजिएगा। एक शताब्दी के बाद सम्भवतः इस निर्माण के परिणाम सामने आने आरम्भ हो सकें। लेकिन यदि इस्लाम और उसकी परम्पराओं की बुनियाद पर आप चरित्र निर्माण करना चाहें तो कल ही से यह काम शुरू हो सकता है। हर नया आनेवाला दिन उसके प्रभाव व परिणामों को सामने ला सकता है। शर्त यह है कि आप निर्माण के साथ-साथ ध्वस्त करने का काम जान-बूझ कर न करते रहें।

इस्लाम की बुनियादों पर चरित्र निर्माण की धारणा को किसी सीमित अर्थ में न लीजिए। इसके लिए आपको अपनी पूरी शिक्षा-प्रणाली को अपने पाठ्यक्रम और तरीक़ों और वातावरण सहित परिवर्तित करना होगा। इसके लिए विचार व अवधारणा बनाने वाले समस्त माध्यम (रेडियो, सिनेमा, दूरदर्शन, पत्रकारिता, साहित्य आदि) सही व उचित तरीक़े से इस्तेमाल करने होंगे और उनके ग़लत इस्तेमाल को रोकना होगा। इसके लिए शासन-प्रबन्धकों को तैयार करनेवाले और रक्षात्मक सेवाओं का प्रशिक्षण देनेवाली संस्थाओं की प्रशिक्षण शैली में भी परिवर्तन करना होगा। इसके लिए क़ानूनों में भी संशोधन करना होगा और पूरी व्यवस्था सम्बन्धी नीति में भी परिवर्तन करना होगा। और सबसे बढ़कर इसके लिए हमारे शासक वर्ग को अपनी नियतों, इरादों और तौर-तरीक़ों को बदलना होगा और चुनाव जीतने, सत्ता प्राप्त करने और सत्ता पर क़ब्ज़ा जमाए रखने के स्रोतों व संसाधनों का सुधार भी करना होगा। यह वास्तव में कोई आसान काम नहीं है। बड़ा कठिन काम है, जिस पर तबीयतें मुशकिल से उस समय ही तत्पर हो सकती हैं, जब जन-सामान्य और विशिष्ट सभी लोगों को यह महसूस हो जाए कि क़ौम अगर डूबी तो यहाँ कोई तैंरनेवाला न रह सकेगा।